Peer Reviewed Journal for M.Phil., Ph.D. & Appointment of Teacher in Universities & College

ISSN : 2394-3580 VOLUME - 10, No. : 11, Sep. - 2023

Swadeshi Research Foundation

A MONTHLY JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY RESEARCH

Peer Reviewed & Refereed Journal

Indexing & Impact Factor 5.2

Published by :

Swadeshi Research Foundation & Publication

Seva Path, 320 Sanjeevani Nagar,
Veer Sawarkar Ward, Garha, Jabalpur (M.P.) - 482003

Swadeshi Research Foundation A Monthly Journal of Multidisciplinary Research
International Peer Reviewed, Refereed, Indexing & Impact Factor - 5.2, Ex- UGC S.N. 4990
ISSN : 2394-3580, Vol. – 10, No. – 11, September – 2023, Special Issue Hindi
2023

दलितोद्धार हेतु आन्दोलन में डॉक्टर भीमराव अंबेडकर के चिंतन की उपादेयता

प्रीति सिंह राजपूत, शोधार्थी
डिपार्टमेंट ऑफ पोलिटिकल साइंस, गवर्नमेंट हमीदिया आर्ट्स एंड क़ॉमर्स कॉलेज, भोपाल (म.प्र.)
डॉ. सोना शुक्ला, शोध निर्देशक
प्रोफेसर एंड हेड डिपार्टमेंट ऑफ पोलिटिकल साइंस, गवर्नमेंट हमीदिया आर्ट्स एंड कॉमर्स कॉलेज, भोपाल (म.प्र.)

डॉ. अम्बेडकर केन्द्र को ओर अधिक शक्तियां प्रदान कर देश की एकता एवं अखण्डता के हित में उसे मजबूत देखना चाहते थे। उन्होनें जोर देकर कहा कि भारतीय समाज न केवल जाति तथा वर्गों में बंटा हुआ है बल्कि इसमें क्षेत्रीय, भाषायी, परम्परागत, संस्कृति और विचारों की भी विभिन्नतायें है। इसलिये प्रादेशिक एकता और प्रशासनिक अनुशासन के लिये एक प्रबल केन्द्र अत्यन्त आवश्यक है।[1] डॉ. अम्बेडकर का राष्ट्रवाद दलितों और निर्धनों तथा देश–प्रेम के उद्धार के साथ प्रारम्भ हुआ था। उन्होनें उन्हें समानता और नागरिक अधिकार दिलाने के लिये संघर्ष किया। राष्ट्रीयता सम्बन्धी उनके विचार केवल गुलाम देशो की मुक्ति तक ही सीमिति नही है, वरन् वह प्रत्येक व्यक्ति की स्वतन्त्रता चाहते है। उनके अनुसार समता के बिना स्वतंत्रता अधूरा लोकतंत्र है।[2]

डॉ. अम्बेडकर चाहते थे कि जाति विहीन की स्थापना हो जिसमें कौमी एकता, राष्ट्रीय भावना, वैयक्तिक, स्वतन्त्रता, सामाजिक समता तथा धार्मिक सहिष्णुता जैसे आदर्शो का अनुसरण किया जाये। किसी के साथ छुआ–छूत तथा ऊँच–नीच का व्यवहार न हो और सभी नागरिक निर्भय होकर शान्ति एवं सद्भावना पूर्ण जीवन यापन करें। 'बहुजन हिताय एवं बहुजन सुखाय' के बौद्ध सिद्धान्त को वह व्यवहारिक बनाना चाहते थे। डॉ. अम्बेडकर की प्रत्येक रचना तथा भाषण में दीन हीन, दलित–पीड़ित लोगों के प्रति प्रगाढ़ प्रेम की अभिव्यक्ति मिलती है। डॉ. अम्बेडकर ने अपने मानववादी दर्शन में न केवल भारतीय दर्शन, विशेषकर बौद्ध धर्म एवं चिंतन को अधार बनाया अपितु पाश्चात्य विचार धारा को भी ध्यान में रखा। वह धर्म तथा दर्शन के रहस्यवादी पक्षों से दूर रहे और विज्ञान तथा धर्म के उन्हीं पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जिसमें मानव कल्याण सम्भव है।

स्वतन्त्रता पूर्व भारत में आजादी के लिए कई लोगों ने संगठन बनाकर आंदोलन किए पर उस समय दलित वर्ग की ओर किसी ने कोई ध्यान नहीं दिया। अछूत लोगों का जीवन एक पशु समान जीवन था। डॉ. अम्बेडकर हृदय सम्राट माने जाते हैं, और शोषित वर्गों का उन्हें हिमायती समझा जाता है। भारत में शोषित (अछूतों) के उद्धार के लिए उन्होंने बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया। इसलिये प्रत्येक भारतीय को उनके जीवन चरित्र को समझने का प्रयास करना चाहिए। अछूतों, निर्धनों के उद्धार के लिये उन्होंने 'आत्म– सहायता' के सिद्धान्त पर अधिक बल दिया 'आत्म–सहायता' ही उत्तम सहायता है।[3] हिन्दू समाज व्यवस्था के अन्याय के विरुद्ध लड़ाई डॉ. अम्बेडकर ने लड़ी। अछूतों और पिछड़ों की दशा सुधारने के इच्छुक कई समाज सुधारकों ने प्रयास किये, किन्तु अम्बेडकर का मार्ग दूसरों से पृथक था। वे ऐसे नेता थे, जो अछूतों की भांति सोचते और उन्हीं के समान अनुभव करते थे। एक दशक से अधिक समय तक डॉ. अम्बेडकर ने अछूतों पर ढ़ाये जा रहे अत्याचारों, अन्यायों और घृणापूर्ण व्यवहारों को भली प्रकार देखा था।[4]

डॉ. अम्बेडकर ने दलितोद्धार हेतु समय–समय पर आवश्यक साधनों, यथा सत्याग्रह, भाषण, लेख आदि का सहारा लिया। अम्बेडकर ने पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित करके, सैकड़ों सभाओं को सम्बोधित कर और महाड़ व नासिक मोर्चों को संगठित कर अछूतों को यह समझाया और जतलाया कि सामाजिक संकट व टकराव पैदा किये वगैर कोई उनकी दयनीय स्थिति के विषय सोचने का काम नहीं करेगा। इस टकराव में 'रक्तपात' की सम्भावना को नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता। उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा "एकता से साहस पैदा होता है, साहस से आन्दोलन छेड़े जाते हैं, और उन्हीं से कुछ प्राप्त भी होता है।[5].....दलितोद्धार के कार्यक्रम में भी सामाजिक संकट होगी और खून–खराबा भी"।[6]

सार–संक्षेप :– प्रस्तुत शोधपत्र दलितों के सुधारवादी आन्दोलन के विश्लेशण से सम्बन्धित है। दलित आन्दोलन युग का शुभारंभ बुद्धकाल से शुरु होकर अम्बेडकर काल तक चला, जिसके उपरान्त दलित आन्दोलन ड़ा. अम्बेडकर के समय तक सम्पूर्ण भारत में फैल चुका था। संविधान के शिल्पकार भारत रत्न डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा का प्रथम लक्ष्य संघर्ष और राष्ट्रीय आंदोलन के माध्यम से भारत की परंपरागत रूढ़िवादी अमानवीय जाति व्यवस्था का उन्मूलन और समतावादी समाज का निर्माण करना था। उन्होंने अपमानो एवं तिरस्कारों से विचलित हुए बिना अपने

वाले संघर्ष का मुहर्त स्तम्भ 'महाड़ सत्याग्रह' द्वारा स्थापित करने का निश्चय किया। इस सभा में उन्होंने कहा कि अस्पृश्यों का उद्धार केवल अस्पृश्यों के बलबूते पर नहीं होगा, अपितु सारे हिन्दू समाज को साथ लेकर आगे बढ़ना होगा। उनका सदैव यही प्रयास रहा कि पूरा हिन्दू समाज आगे बढ़े। और सारे समाज के विचारों में परिवर्तन आये।[11] हिन्दू धर्म की विषमतापूर्ण व्यवस्था के कारण दलितों को सार्वजनिक कुएँ और तालाब से पानी पीने का अधिकार नहीं था। मठ–मन्दिरों में देवी–देवताओं के दर्शनार्थ दलितों का प्रवेश वर्जित था। इन अमानवीय व्यवस्थाओं की ओर मानवतावादी सभ्य समाज का ध्यान आकर्षित करने तथा प्रचार–प्रसार हेतु डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में महाड के चावदार तालाब से पानी पीने के अधिकार को लेकर 19 मार्च 1927 को पहला सत्याग्रह आयोजित किया।[12]

स्वतन्त्रता से पूर्व आर्थिक विषमता ने भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ ही तोड़ दी थी। तथा किसी भी क्षेत्र में आर्थिक विकास नहीं हो पा रहा था। एक अन्तर्राष्ट्रीय और विद्वान अर्थशास्त्री होने के नाते डॉ. अम्बेडकर ने भारत की आर्थिक दुर्दशा की गहन समीक्षा की और कहा कि देश की आर्थिक उन्नति तभी सम्भव है जब हम स्वतन्त्र होकर अपने उधोग–धन्धे स्थापित कर भारत का आर्थिक विकास करें।[13] अम्बेडकर सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं आर्थिक दृष्टि से पद्दलित लोगों के प्रति समर्पित नेता थे। आजादी के पूर्व एवं पश्चात् वह धर्म के सुधारवादी–आलोचक और राजनीतिक में एक निश्चित दृष्टिकोण अपनाने वाले व्यक्ति थे। संविधान के महान निर्माता और गम्भीर विद्वान, जिज्ञासु भी थे। इन सबसे अधिक वह अनेक स्तरों पर मानव मुक्ति के लिए एक सशक्त योद्धा थे।[14]

बाबा साहेब अम्बेडकर तो स्वयं सामाजिक न्याय के अग्रदूत थे। उन्होंने सामाजिक न्याय का अध्ययन किया, उसकी पीड़ाओं को भोगा और उसके क्रूर प्रहारों को सहन ही नहीं किया, अपितु साहस पूर्वक उनका डटकर सामना किया। भारत में, विशेषकर हिन्दू समाज विद्यमान सामाजिक अन्याय ने ही डॉ. अम्बेडकर को सामाजिक न्याय के स्वरूप और विषय पर चिन्तन करने के लिए बाध्य कर दिया।[15]

राजनीतिक व्यवस्तता मनुष्य के कार्यक्रमों और योजनाओं को अव्यवस्थित करती है। लेकिन मनीषी डॉ. अम्बेडकर ने ऐसा नहीं होने दिया। उन्होंने एक उच्चकोटि की शिक्षा संस्था की स्थापना करने का विचार किया। 20 जुलाई 1964 को उन्होंने ''पीपुल्स एजूकेशन सोसाइटी'' की नीव डाली। उन्होंने अपने वर्ग के लोगों को यह अहसास दिलाया कि जो जातियाँ हमारे समाज में मानसिक और शारीरिक रूप से हमारे शोषण का कारण बनी हुई है। वह जाति उच्च वर्गों की दी हुई पहचान हैं अगर उनका फायदा हमारी जाति बनाने में है तो हमारा फायदा किसमें है ये गम्भीर रूप से सोचने का विषय है।[16]

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार जाति से हमारे ऊपर मनौवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है क्योंकि वह जाति हमें नीच होने का बोध कराती हैं। भारत के स्कूलों, कॉलेजों और यूनिवर्सिटी में समाज शास्त्र की जगह ''जातिशास्त्र'' पढ़ाया जाना चाहिए जिससें हमारे ऊपर वैज्ञानिक दृष्टि से बदलाव आयेगा क्योंकि हमें जाति और समाज दोनों को ही पढ़ने का मौका मिलेगा।[17] जिससे हम अपनी आने वाली पीढ़ी को असानी से बदल सकते हैं क्योंकि समाज अच्छा है मगर जाति बुरी है। डॉ. अम्बेडकर स्वयं दलित वर्ग में पैदा हुये थे, उन्होंने उन सभी आपदाओं, कठिनाईयों के झेला जो सामाजिक, शैक्षिक, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में दलित वर्ग को झेलनी पड़ती थी। डॉ. अम्बेडकर ने अपने करोड़ों दलितों, शोषितों और प्रवंचित लोगों को मुक्ति की कठोर प्रतिज्ञा की थी। इस हेतु उन्होंने दलित समाज का गहन अध्ययन किया और दलित उद्धार हेतु एक सामाजिक आंदोलन की संरचना की। इस आंदोलन की सफलता के लिए अनेकानेक लेख और पुस्तकें लिखी, सामाजिक पाक्षिक पत्रिकायें प्रकाशित कराई और अनेक स्थानों पर सभा तथा सम्मेलन आयोजित कराये।[18]

3 मार्च 1930 को दलितों के अधिकार को लेकर दूसरा सत्याग्रह डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्त्व में नासिक में स्थित कालाराम मंदिर प्रवेश सत्याग्रह के नाम से आयोजित किया गया। इस सत्याग्रह में महाराष्ट्र, कर्नाटक और गुजरात आदि प्रदेशों से करीब 15 हजार लोग इकट्ठा हुए। मन्दिर पर मोर्चा गया, पर मन्दिर के दरवाजे बन्द थे। दरवाजे खोले नही गये। फिर यह मोर्चा गोदावरी नदी के किनारे गया, वहाँ पर हुर्य सभा को सम्बोधित करते हुए बाबा साहब ने कहा कि, 'उनका आन्दोलन करना किसी आध्यात्मिक जिज्ञासा या आत्मपूर्ति के लिए नहीं, बल्कि उनका मकसद अपना मानवीय अधिकार प्राप्त करना है कि वह भी इन्सान है'।[19]

दूसरे दिन से मन्दिर के प्रवेश द्वार पर सत्याग्रह का निर्णय लिया गया। 3 मार्च, 1930 से अक्टूबर 1935 तक कई बार प्रयत्न हुए। अन्ततः मन्दिर के दरवाजे खुल गये। इस प्रकार इस सत्याग्रह मे बाबा

की रक्षा की।[25]

पूना पैक्ट हस्ताक्षर करने से पूर्व डॉ. अम्बेडकर ने कहा था, "इस प्रकरण में खलनायक होना मेरे भाग्य में बदा है' परन्तु जिसे मैं पवित्र कर्तव्य मानता हूँ, उससे मैं विचलित नहीं होऊँगा। मैं अपने लोगों को न्यायोचित हितों के प्रति विश्वासघात नहीं करूँगा फिर भले ही आप मुझे नजदीक के खम्भों पर फाँसी चढ़ा दें।"[26] अतः इस समझौते के अनुसार पृथक निर्वाचन के स्थान पर संयुक्त निर्वाचन प्रणाली अपनाई गई।

अम्बेडकर ने राष्ट्र की दासता और अस्पृश्य जनों की गुलामी की तुलना करते हुए चिंतन किया कि राष्ट्र की गुलामी से अस्पृश्यता समाज की गुलामी हालत बहुत ज्यादा दर्दनाक है। इसे समाप्त करने के लिए अस्पृश्यता समाप्त करनी होगी, नहीं तो देशांतर करने का रास्ता अपनाना पड़ेगा। 13 नवंबर 1927 को मंदिर प्रवेश कमेटी द्वारा इंद्रभुवन थियेटर में एक परिषद आयोजित की गयी थी। इस परिषद के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए अम्बेडकर ने कहा, "कोई भी देवता अस्पृश्यों के कारण भ्रष्ट नहीं होता इसलिए अस्पृश्य समुदाय के लिए अलग मंदिर बनाया जाये, इसका हम विरोध करते हैं। यदि यह माना जाता है कि हिंदुत्व के हिंदुओं के लिए है तो फिर वह स्पृश्य और अस्पृश्य दोनों के लिये हैं।[27]

स्वतंत्रता आंदोलन से पूर्व भारत में तीन मोर्चों पर आंदोलन किया जा रहा था। पहली लड़ाई कांग्रेस लड़ रही थी, जिसका उद्देश्य अंग्रेजों से भारतीयों का सत्ता हस्तानान्तरण कराना था। दूसरी लड़ाई में मौहम्मद अली जिन्ना शामिल थे जो अल्पसंख्यकों के लिए अलग राज्य की माँग कर रहे थे। और तीसरी लड़ाई में पुरोधा डॉ. भीमराव अम्बेडकर थे, जो शताब्दियों से ग्रसित और दलित इस देश के गुलामों को मनुष्य होने की स्वतन्त्रता दिलाने के लिए संघर्षरत थे।[28]

प्रश्न उठता है कि स्वतन्त्रता आंदोलन में किसकी भूमिका अधिक सार्थक थी? यहाँ पर यह तथ्य विचारणीय है कि मनुष्य ही समाज की इकाई है, उनसे मिलकर समाज बनता है और समाज से राष्ट्र। अतः राष्ट्र की स्वतन्त्रता और मनुष्य की स्वतन्त्रता एक सिक्के के दो पहलू होते हुए भी मनुष्य की स्वाधीनता सर्वोपरि है। एक स्वतन्त्र राष्ट्र में यदि अस्सी प्रतिशत आबादी गुलामों का जीवन जीने को अभिशप्त हो तो उस राष्ट्र को स्वतंत्र कैसे कहा जा सकता है? यही संघर्ष डॉ. अम्बेडकर के चिंतन में मूल था।[29]

करोड़ों अपेक्षित भारतीयों को मानवाधिकार दिलाने के लिए जब अम्बेडकर ने संघर्ष का बिगुल बजाया तो इस देश के तथा कथित उच्च वर्गीय नेताओं के साथ–साथ अंग्रेज शासकों के भी कान खड़े हो गये। और अन्त में अपने अकाट्य तर्कों और ओजस्वी वाणी से अम्बेडकर उन्हें यह अहसास कराने में सफल हुए कि अस्पृश्यता को समाप्त किये बिना और इस वंचित समाज को सत्ता में भागीदार बनाए बिना इस राष्ट्र की स्वतंत्रता दिवा स्वप्न ही रहेगी।[30] अन्ततः देश स्वतन्त्र हुआ और सदियों की अमानवीय दुरावस्था का अन्त होकर भारत के सभी नागरिकों के लिए एक समान संविधान की व्यवस्था हुई। कल्पना की जा सकती है कि यदि उस समय अम्बेडकर दलितों को अधिकार दिलाने के लिए संघर्ष न करते तो भारत का भविष्य क्या होता।[31] जिस देश की अस्सी प्रतिशत आबादी परतन्त्र हो उस देश को स्वतन्त्र कहना स्वतन्त्रता का अपमान करना होता। अतः जो तथा कथित लोग आज एक षड्यन्त्र के तहत यह कुप्रचार करने का प्रयास कर रहें हैं वही अम्बेडकर ने स्वतन्त्रता आंदोलन में भाग नहीं लिया, क्योंकि उनके चिंतन में देश की स्वतन्त्रता से अधिक महत्त्वपूर्ण है मनुष्य होने की स्वतन्त्रता है जिसके लिए अम्बेडकर जीवन पर्यन्त संघर्ष करते रहे।[32]

अम्बेडकर जी ने कभी अलग राष्ट्र की माँग का समर्थन नहीं किया बल्कि वे एक शक्तिशाली और अखण्ड भारत का निर्माण चाहते थे। जिसने न्याय, समता और बंधुता के सामाजिक सिद्धान्तों को मान्यता मिले और जातिगत या धर्मगत भेदभाव का जहाँ कोई स्थान न हो। आज अम्बेडकर जी को उनके अनुयायियों ने मात्र पूजा की वस्तु बना दिया है। उनके दर्शन और चिन्तन पर विचार नही किया गया। इससे राजनीतिक लाभ तो प्राप्त किया जा सकता है किन्तु एक समरस और समृद्ध समाज की स्थापना नहीं की जा सकती। दुःख का विषय तो यह है कि कुछ लोग डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को समझने की बजाए देश की स्तन्त्रता में उनके योगदान की ही अनदेखी कर रहें हैं।[33]

निष्कर्ष :– भारतीय समाज मे यद्यपि दलित वर्गो की स्थिति सुधारने के लिए अनेक आन्दोलन किये गये। तथा कुछ हद तक उनकी स्थिति मे सुधार भी आया। दलित जातियों ने भौक्षणिक एंव व्यवसायिक दृष्टि से प्रगति की फिर भी उनको समाज मे उच्च जातियों के समकक्ष स्थान प्राप्त नहीं है। इस वर्ग के सदस्य इस आधार पर हीन भावना से ग्रस्त है कि उनको उत्पत्ति